भारतीय वाङ्मय

हिन्दी तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की मासिक पत्रिका

वर्ष 5 | **जनवरी** 2004 | **अंक** 1

किसी भी स्वाधीन और स्वाभिमानी देश का कामकाज उसकी अपनी भाषा में होना गर्व का विषय होता है। दुनिया के हर देश का कामकाज उसकी अपनी भाषा में होता है लेकिन अपने देश में यह कैसी विडम्बना है कि लोग मातृभाषा के बजाय अंग्रेजी में काम करना पसन्द करते हैं। यह विचित्र परिस्थिति है।

जब अमेरिका, चीन, जापान, रूस, इंग्लैण्ड के लोग अपनी भाषा में कामकाज करने में गौरवान्वित महसूस करते हैं तब हमारे यहाँ के लोगों को गौरव क्यों नहीं महसूस होता। वह अंग्रेजी में बोलकर अपने को ज्यादा विद्वान मानने लगते हैं। अंग्रेजी भाषा का ज्ञान होना अच्छी बात है लेकिन उसका रोज के कामकाज में प्रयोग उचित नहीं है।

यह समस्या सिर्फ हिन्दी के साथ नहीं है। तेलुगु, तमिल, कन्नड़, बंगला आदि दूसरी भारतीय भाषाओं के साथ भी है। जिस तरह से हिन्दी, हिंगलिश होती जा रही है, उसी तरह से बंगला, बंगलिश और तमिल, तमिलिश होती जा रही है। यानी भारतीय भाषा के साथ इंगलिश के शब्द बोलने से भाषाएँ भ्रष्ट हो रही हैं। ऐसा करके हम पीढ़ियों को क्या सन्देश दे रहे हैं। हिन्दीभाषियों को हिन्दी के अलावा एक और भारतीय भाषा सीखनी चाहिए।

— विष्णुकान्त शास्त्री
राज्यपाल, उत्तर प्रदेश

शिक्षा और लोकतंत्र दोनों को अगर जिन्दा रखना है तो बच्चों को शिक्षा प्रादेशिक भाषा में देनी होगी।

— राधा कृष्ण आयोग

प्रारम्भिक कक्षाओं में बच्चों की पढ़ाई केवल मातृभाषा में होनी चाहिए। दूसरी भाषा में शिक्षा देने पर बच्चों के सुकोमल मस्तिष्क पर अत्याचार होता है और उनकी मौलिक सोच कुंठित होती है। आठवीं से दसवीं तक तीन भाषाएँ पढ़ाई जा सकती हैं।

— सर्वोच्च न्यायालय, भारत सरकार

भाषा ऊपर से नहीं, नीचे से ली जानी चाहिए। भाषा को स्वतंत्र, स्वाभाविक चिंतन और जनाकांक्षाओं के अनुरूप होना चाहिए। अंग्रेजी के जो प्रचलित शब्द हैं, उन्हें ग्रहण कर लेना चाहिए।

—हजारीप्रसाद द्विवेदी

जो कुछ हमारे पास है, उसे समझें और जो चल सकता हो, उसे ग्रहण करें, जीती है वही भाषा, जिसकी बुनियाद साधारण जीवन पर खड़ी होती है, उसी की धारा में नए गढ़े शब्द डाले जाते हैं, जो घिस-पिटकर हमारे हो जाते हैं, ऐसे सारे शब्द अपना लिए जाने चाहिए, वे चाहे कहीं से भी आए हों।

—अज्ञेय

छप्पन वर्षों की हताशा

पिछले दिनों दिल्ली में 'राष्ट्रीय आन्दोलन, हिन्दी और गाँधी' पर आयोजित संगोष्ठी में प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी ने चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा—''यह ऐतिहासिक सच है कि हिन्दी भारत की राजभाषा है। मगर यह उतना ही कटु सत्य है कि राजभाषा आज भी अपना अपेक्षित स्थान नहीं ले सकी है। इस पर विचार करना जरूरी लगता है कि 56 वर्षों बाद भी ऐसा क्यों लगता है कि राष्ट्रीय आन्दोलन की हमारी भावना और चेतना शिथिल पड़ने लगी है। गाँधीजी ने अपनी पुस्तक 'राष्ट्रभाषा' में लिखा है—पाँच लक्षणों से युक्त हिन्दी भाषा की समता करने वाली दूसरी कोई भाषा है ही नहीं।''

वाजपेयीजी की चिन्ता के परिदृश्य में देश के विभिन्न प्रदेशों की शिक्षा नीति और भूमण्डलीकरण की ओर तेजी से बढ़ते कदम हैं। आज भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी सभी प्रदेश बच्चों को कक्षा एक से अंग्रेजी पढ़ा रहे हैं। आगमी वर्ष से हिमाचल प्रदेश ने प्राइमरी स्कूलों में कक्षा एक से अंग्रेजी पढ़ाने का निर्णय किया है। कहा गया है कि इससे निर्धन और दलित परिवार के बच्चे, जो गाँवों में रहते हैं, उन्हें प्रारम्भ से अंग्रेजी सीखने का अवसर मिलेगा, उनमें आत्मविश्वास का सृजन होगा। वे नगरों के पब्लिक स्कूलों के छात्रों से प्रतिस्पर्धा कर सकेंगे। हिमाचल प्रदेश सरकार का लक्ष्य है कि सरकारी स्कूल के बच्चों को कान्वेंट और निजी स्कूल के बच्चों के निकट लाया जाय। इससे शिक्षा का स्तर उन्नत होगा।

हिमाचल सरकार की जो धारणा है वही न्यूनाधिक देश के सभी प्रदेशों की सरकारों की भी धारणा है। आज यह सोच क्यों उत्पन्न हुई? इस पर विचार करना चाहिए। शासन के समस्त प्रस्तावों, प्रयासों, कार्यक्रमों के बावजूद प्रशासनिक स्तर पर हिन्दी देश में वह स्थान नहीं प्राप्त कर सकी जिसकी अपेक्षा की जाती थी। भूमण्डलीकरण, और विश्व-प्रतिस्पर्धा ने तो हिन्दी ही नहीं सभी भारतीय भाषाओं को दूसरे दरजे की भाषा बना दी है। इसने एक 'एंग्लो इण्डियन अभिजात वर्ग' की जमात खड़ी कर दी है।

आज देश की सभी भाषाओं—हिन्दी, बांग्ला, गुजराती, मराठी, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम आदि का विकास अवरुद्ध है। इन भाषाओं में अंग्रेजी के शब्द प्रवेश करते जा रहे हैं। भाषा की मौलिकता, शुद्धता सभी समाप्त होती जा रही है। अंग्रेजी, जो उनके घर-परिवार-समाज-परिवेश से भिन्न भाषा है, उसे सीखने में काफी परिश्रम करना पड़ता है, कोमल मस्तिष्क पर आघात पहुँचता है। परिणाम यह है कि वे अपनी ही भाषा की गरिमा को ग्रहण नहीं कर पाते। झारखण्ड में एक बच्चे को अपने साथियों से हिन्दी में बात करने की सजा ऊबड़-खाबड़ जमीन पर घुटनों के बल चलने की भुगतनी पड़ी। किसी समय मिडिल पास विद्यार्थी शुद्ध भाषा लिखते थे, किन्तु आज स्नातक भी अपनी भाषा न शुद्ध बोल पाते हैं, न लिख पाते हैं। इतना ही नहीं, वे हिन्दी में लिखे गये गम्भीर विषयों के ग्रन्थों को भी समझ नहीं पाते।

अन्त में निवेदन है कि—भाषा सभ्यता का शास्त्र है और शस्त्र भी। भाषा का शास्त्र हमारी जीवन-संस्कृति, सभ्यता, संस्कार और परिवेश है, वह शस्त्र बन जाता है जब सभ्यता पर संकट आता है। आज अंग्रेजी ने देश में पाश्चात्य संस्कृति और सभ्यता का जो प्रसार किया है उसने हमारी जीवनशैली बदल दी है और जिस भाषायी शस्त्र से हमने आजादी पाई उस शस्त्र को हमने त्याग ही नहीं दिया उसे विकृत भी कर दिया। देश की अस्मिता की रक्षा के लिए यह विचारणीय है। भारत को भारत बना रहने दें, इण्डिया न बनायें।

— पुरुषोत्तमदास मोदी

स्मृति-शेष

बदरीविशाल पित्ती

इधर कुछ वर्षों से पत्र व्यवहार का सम्पर्क छूट गया था। हालचाल श्री चन्द्रशेखर गुप्त 'पापाजी' (मोतीझील, वाराणसी) से मिल जाता था। पत्र-व्यवहार का सम्पर्क क्या करेगा? मेरे सबसे प्रिय परमात्मा हैं। किन्तु उनसे पत्र व्यवहार नहीं हो पाता है। लिखकर भी भेज नहीं पाता हूँ। उनके विराट् को समर्पित कर देता हूँ।

बदरीविशाल पित्ती से सम्बन्ध 'कल्पना' (मासिक) के द्वारा हुआ था। वे अपने नगर हैदरबाद से हिन्दी की मासिक पत्रिका 'कल्पना' निकालते थे। स्वामी, संचालक और सम्पादक तीनों थे। किन्तु मुख्य सम्पादक संस्कृत के आचार्य डॉ०आर्येंद्र शर्मा थे। शर्माजी के नेतृत्व में 'कल्पना' को अत्यन्त ऊँचा स्तर प्राप्त हुआ। इसका मुख्य श्रेय बदरीविशालजी को था। वे साहित्य की किसी दलबंदी से दूर रहना चाहते थे। जो भी स्तरीय था, उसका प्रकाशन करते थे। फलत: 'कल्पना' सम्पूर्ण देश में लोकप्रिय हो गयी। पटना से श्री लक्ष्मीनारायण 'सुधांशु' के सम्पादन में 'अवन्तिका' निकली। किन्तु वह भी 'कल्पना' जैसी प्रियता न पा सकी। अहिन्दी क्षेत्र से निकलकर भी 'कल्पना' हिन्दी के शीर्ष पर पहुँची। दिनकरजी की 'उर्वशी' छपी थी। बदरीविशालजी ने पूरे देश से उस पर विचार मँगवाए। सभी प्रतिक्रियाओं को छापा। उनमें डॉ० भगवतशरण उपाध्याय की भी प्रतिक्रिया थी। यह प्रतिक्रिया शाब्दिक रूप से 'उर्वशी' की आलोचना थी। एक स्तम्भ चला। इस स्तम्भ में हिन्दी के व्याकरण दोष पर विचार होता था। इस दोष से शायद कोई हिन्दी का बड़ा लेखक बचा हो। सभी बड़े लेखकों के भाषा-दोष उद्घाटित किए गए।

बदरीविशालजी के पूर्वपुरुष भी हिन्दीप्रेमी थे। हैदराबाद में उनके द्वारा स्थापित, संचालित हिन्दी स्कूल हैं। बदरीविशाल ने दक्षिण के लेखकों को भी सम्मान दिया था। 'कल्पना' के सम्पादकमण्डल में भी एक आन्ध्र लेखक थे। कभी 'कल्पना' में भवानीप्रसाद मिश्र भी काम करते थे। उनका एक कविता-संग्रह भी बदरीविशालजी ने प्रकाशित किया था। गया-निवासी श्री मुनींद्र अब 'दक्षिण समाचार' निकालते हैं। ये भी 'कल्पना' सम्पादक-मण्डल में थे। कलाकार जगदीश मित्तल भी कल्पना से जुड़े थे। प्रसिद्ध चित्रकार मकबूल फिदा हुसेन को बदरीविशालजी का संरक्षण प्राप्त था। हुसेन को उच्च स्तरपर पहुँचाने का श्रेय बदरीविशालजी को है। उन्हीं की प्रेरणा से हुसेन के रामायणसम्बन्धी चित्रों की एक प्रदर्शनी श्री राधारमणजी के बनारस लाज में हुई। एक बार वे मोतीझील में प्राय: एक मास से अधिक रह गये। बाबू ज्योतिभूषण गुप्त की पत्नी सुलभाजी उनकी बहन थीं। उस समय वाराणसी का साहित्य समाज एवं राजनेता उनसे मिलते थे।

बदरीविशालजी में कला की रुचि भी गहरी थी। 'कल्पना' के मुखपृष्ठ पर हुसेन के पुत्र शमशाद हुसेन के चित्र छपते थे। 'कल्पना' शुद्ध साहित्यिक और सांस्कृतिक पत्रिका थी। इसे कहने का विशेष मतलब है।

बदरीविशालजी की राजनीति में भी गहरी पैठ थी। वे श्रमिक आन्दोलन से जुड़े थे। एक बार स्व० रामराव की पार्टी से विधायक भी बने थे। डॉ० राममनोहर लोहिया की सोशलिस्ट पार्टी का प्रथम सम्मेलन हैदराबाद में हुआ। केन्द्रीय कार्यालय भी वहीं था। मैनकाइन्ड (अंग्रेजी मासिक), चौखंभा (हिन्दी साप्ताहिक) वहाँ से निकाला गया। डॉ० लोहिया के सम्पूर्ण वाङ्मय के प्रकाशन, रक्षण, प्रसारण का श्रेय बदरीविशालजी को है। हिन्दी ग्रन्थों के प्रकाशन की भी उनकी योजना थी। साहित्यिक पत्रकारिता में उनका महत्त्वपूर्ण योग था। डॉ० विवेकी राय ने 'कल्पना' की सामग्री को आधार बनाकर 'कल्पना' द्वारा साहित्य-सेवा पर एक ग्रन्थ लिखा है। यह ग्रन्थ इलाहाबाद से प्रकाशित है।

'कल्पना' के माध्यम से बदरीविशालजी ने अनेक नये साहित्यकारों को पूरे देश में खड़ा किया। कई लोग प्रथम बार, कई लोग बार-बार 'कल्पना' में छपे। 'कल्पना' में छपने का पारिश्रमिक भी मिलता था। आगे चलकर 'कल्पना' का संचालन कठिन हो गया। उससे हिन्दी साहित्य की भारी क्षति हुई। बदरी विशालजी हैदराबाद के सामंत परिवार के पुत्र थे। अत: उनमें सामंती गुण-दोष भी थे। उच्च शरीर, भव्य भाल, सुचिक्कन में सामंती गरिमा सबको आकर्षित करती थी। समाजवादी की रुक्षता का उनमें सम्पूर्ण अभाव था। मजदूरों के बीच भी वे सामंत थे। सामंतों के बीच और अधिक सामंत थे। संरक्षण देना उनका स्वभाव था। मित्र बनाने में उन्हें प्रसन्नता होती थी। अन्त तक किताबों से जुड़े थे। किसी भी प्रदर्शन से दूर रहते थे। सब सहज ढंग से करने के बाद भी वे सहजिया नहीं थे।

बिहार में हुजूर कहने की प्रथा है। विधायक मंत्री को हुजूर कहता है। श्री धनिकलाल मंडल विधान सभा के अध्यक्ष थे। बदरीविशालजी पटना गए थे। उन्होंने मंडलजी को प्रेरित किया। हुजूर प्रथा बन्द करें। किन्तु प्रवाह रुका नहीं। अब तो सब हुजूर हैं। बिना हुजूर के हाजिर होना सम्भव नहीं।

अभी पता चला बदरीविशालजी हमें छोड़ गए। उनके पत्र टंकित होते थे। ऊपर का सम्बोधन और नीचे का हस्ताक्षर उनके हाथ से लिखा होता था। अब ये स्मरण हैं।

—युगेश्वर

प्राच्य विद्या के विद्वान्
प्रो० विश्वम्भरशरण पाठक नहीं रहे

गोरखपुर विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्राचीन इतिहास के विद्वान् प्रो० विश्वम्भरशरण पाठक का शुक्रवार 19 दिसम्बर 2003 को निधन हो गया। 17 दिसम्बर को डॉ० पाठक अपने घर के सामने टहल रहे थे। तभी उन्हें साँड़ ने मार दिया। डॉ० पाठक रिसर्च एसोसिएट के रूप में प्रो० आर०सी० मजूमदार से सम्बद्ध रहे। 1953-54 में केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय में शिक्षाधिकारी रहे। 1962 में बी०एच०यू० में रीडर बने और 1964 में गोरखपुर विश्वविद्यालय में प्राचीन इतिहास एवं पुरातत्त्व विभाग के आचार्य व अध्यक्ष नियुक्त हुए। 1989 से 1992 तक कुलपति रहे। प्राचीन इतिहास, धर्म, दर्शन, संस्कृति सहित अनेक विषयों और भाषाओं पर समान अधिकार रखने वाला विद्वान् नहीं रहा। भारतीय वाङ्मय परिवार की विनम्र श्रद्धांजलि।

सीताराम मारू

राँची के दैनिक समाचारपत्र 'राँची एक्सप्रेस' के संचालक और सम्पादक सीताराम मारू का दिसम्बर के पहले सप्ताह में राँची में देहान्त हो गया। पत्रकारिता के प्रति समर्पित मारू ने अपने पत्र को राष्ट्रीय तथा सामाजिक समस्याओं से जोड़कर लोकप्रिय बनाया था। लेखन में उनकी विचारधारा देश की अखण्डता के लिए विकल रहती थी। उनके निधन पर प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी ने संवेदना प्रकट की थी।

आपका पत्र

'भारतीय वाङ्मय' में विविध कालम जैसे पुरस्कार-सम्मान, विशिष्ट-पत्र, लोकार्पण, साहित्य समीक्षा, गोष्ठी, विचार, कथन आदि बहुत-सी अज्ञात रोचक जानकारी मिल जाती है, जो पठनीय तो होती ही है, ज्ञानवर्धक भी होती है। ऐसी विशिष्टता बहुत कम प्रकाशकीय पत्रिकाओं में होती है।

विशिष्ट पत्र में प्रेमचंदजी का यह उद्धरण अच्छा लगा कि 'यहाँ तो सभी सम्राट हैं।' वहाँ तब लेखक एक-दूसरे को सम्राट कह रहे थे, पर बाद में तो प्रेमचंद को हिन्दी समाज/पाठक, लेखक ने उपन्यास सम्राट की उपाधि दी। कहा भी है कि काशी तीन लोक से न्यारी। वहाँ गुरू भी सभी हैं, जैसे का गुरू? हाँ गुरू। गुरू भी गुरू चेला भी गुरू। नाम के पहले भी आचार्य नाम के बाद भी आचार्य।

इसी तरह 'कथन' कालम में उग्र और शिवपूजन का प्रसंग बड़ा मार्मिक लगा। वैसे दु:खद अवसर पर कौन आने वाले का कारण पूछेगा और कौन अपना दु:ख परे कर उसकी समस्या का निराकरण करेगा वह भी एक गलत कार्य के लिए।

वैसी संवेदना और वैसे सम्बन्ध वाले अब कहाँ रह गए?

ऐसे प्रसंगों के लिए धन्यवाद। ऐसे ही अनछुए अज्ञात मार्मिक तथा संवेदनशील प्रसंगों को स्थान देते रहें। यह आपकी पुरानी पीढ़ी के साहित्यकारों के प्रति श्रद्धा होगी। **— अमरनाथ शुक्ल,** दिल्ली

'आइये इन्हें स्मरण करें' लेख मन को छू गया। अन्य सूचनाएँ और लघु लेख भी महत्त्वपूर्ण हैं। आपने पुस्तक प्रकाशन और प्रचार पर महत्त्वपूर्ण बातें कही हैं, किन्तु सत्य तो आज इससे से कुछ अधिक है। सत्य यह है कि आज हिन्दी लेखक ही दूसरे हिन्दी लेखक का घोर शत्रु है, जो उसके ग्रुप का नहीं है।

— धर्मेन्द्र गुप्त, दिल्ली

समाचार

महाश्वेता देवी को फ्रांस के पुरस्कार

शोषितों, उपेक्षितों और जनजातीय लोगों के जीवन के दर्द को अभिव्यक्ति देनेवाली 'हजार चौरासी की माँ' की लेखिका महाश्वेता देवी को फ्रांस का सबसे बड़ा नागरिक सम्मान 'आफिसर डी आर्ट्स एट डेसलेटरिया' प्रदान किया गया है। स्वास्थ्य के कारण वे फ्रांस नहीं जा सकीं, अत: भारत में फ्रांस के राजदूत डोमेनिक गिरार्ड ने उनके निवास पर 17 दिसम्बर 2003 को यह सम्मान प्रदान किया।

महाश्वेता देवी ने कहा—ऐसा प्रतिष्ठापरक सम्मान पहली बार प्राप्त हुआ है। तसलीमा नसरीन की पुस्तक 'द्विखण्डिता' पर रोक लगाने के सम्बन्ध में उन्होंने कहा—कोई भी रचना कितनी भी विवादग्रस्त हो रोक न लगाकर उस पर बहस करनी चाहिए। रोक लगाने से पुस्तक की लोकप्रियता ही बढ़ती है।

महाश्वेता देवी इस समय अपनी आत्मकथा लिख रही हैं। बँगला की इस लेखिका की लगभग सभी कृतियों के हिन्दी अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। अन्य भाषाओं में इनके अनुवाद हुए हैं।

सोम ठाकुर
हिन्दी संस्थान के कार्यकारी उपाध्यक्ष

कवि सोम ठाकुर ने उत्तर प्रदेश 'हिन्दी संस्थान' के पूर्णकालिक कार्यकारी उपाध्यक्ष के रूप में अपना कार्यभार शनिवार, 13 दिसम्बर 2003 को ग्रहण कर लिया। सोम ठाकुर कालिदास मार्ग स्थित मुख्यमंत्री आवास पहुँचे, जहाँ मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव ने उनकी आगवानी की। ठाकुर ने उनके सामने ही कार्यभार ग्रहण करने की कार्यवाही की। इस अवसर पर ठाकुर ने कहा कि वह हिन्दी का व्यापक विकास चाहते हैं। इसके लिए मध्यप्रदेश की तर्ज पर प्रतिष्ठित वरिष्ठ साहित्यकारों को पेंशन दी जाए। ब्रजभाषा अकादमी की तरह लोकभाषा संस्थान बनाया जाए। उन्होंने कहा कि खड़ी बोली में लोकभाषाओं के शब्दों का समावेश न हो तो उसमें रस नहीं आता। इसलिए लोकभाषाओं को बढ़ावा देना जरूरी है। यह सब करने के लिए वित्त की जरूरत होती है, पर उन्हें उम्मीद है कि ऐसी कोई कठिनाई नहीं आएगी।

त्रिदिवसीय भाषणमाला

प्राच्य विद्या के प्रकाशन संस्थान मोतीलाल बनारसीदास ने दिल्ली में संस्थान के शताब्दी समारोह के क्रम में आयोजित त्रिदिवसीय भाषण माला में सुप्रसिद्ध न्यायविद एवं राज्यसभा के सदस्य श्री लक्ष्मीमल सिंघवी ने कहा कि शब्दों को उनके मूल अर्थ से अलग नहीं किया जा सकता जबकि अक्सर ही संसद में अर्थ का अनर्थ करने का प्रयास होता है। शब्द समाज की जीवन्त संस्कृति से अर्थ ग्रहण करते हैं। वे अपना अर्थ खो देते हैं जब उनमें अन्तश्चेतना की गहराई नहीं होती। संसद के भाषणों में ऐसा ही होता है।

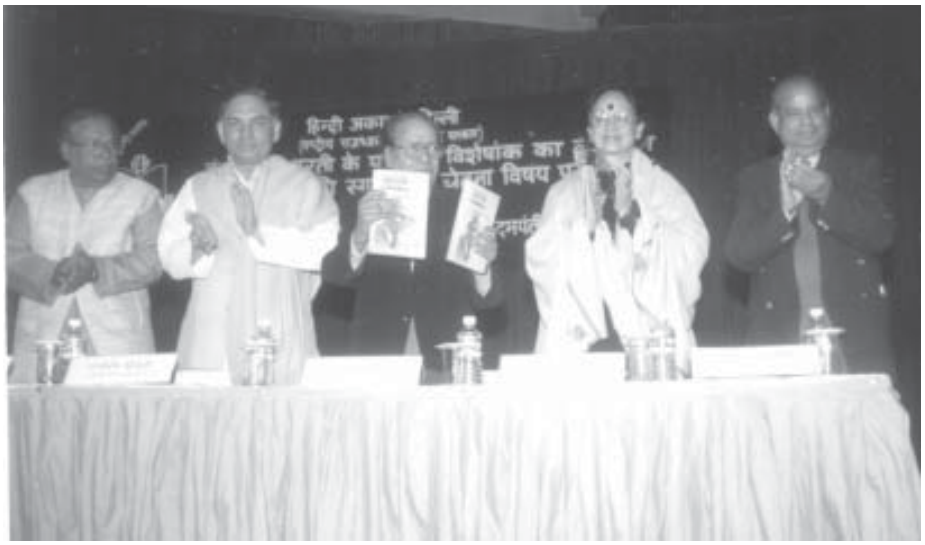

कमलेश्वर द्वारा इन्द्रप्रस्थ भारती के 'यशपाल विशेषांक' का लोकार्पण
बगल में श्रीमती चित्रा मुद्गल

यशपाल शताब्दी समारोह

3 दिसम्बर, 1903 को जन्मे यशपाल की यशपाल शताब्दी का 3 दिसम्बर 2003 को हिन्दी अकादमी दिल्ली ने त्रिवेणी सभागार में आयोजित किया। इस अवसर पर यशपाल की सामाजिक चेतना विषय पर संगोष्ठी का आयोजन हुआ और 'इन्द्रप्रस्थ भारती' के 'यशपाल विशेषांक' का लोकार्पण कथा शलाका पुरुष कमलेश्वर ने किया। अकादमी के अध्यक्ष श्री जनार्दन द्विवेदी ने कहा कि यशपाल की चेतना का जब विकास हुआ उसी समय भारतीय राजनीति में गाँधी का प्रवेश हुआ था। कमलेश्वर ने कहा—यशपाल में सांस्कृतिक दृष्टि दिखाई देती है जो आधुनिकता का विरोध नहीं करती। उनकी रचनाएँ जीवन के सबसे बृहत्तम प्रयोग का नमूना है। वे व्यक्ति के साथ समष्टि की मुक्ति का नक्शा तैयार करते हैं इसलिए सबसे बड़े सामाजिक चेतना के लेखक हैं।

समारोह में विशेषांक के सम्पादक श्री प्रदीप पंत, डॉ० कृष्णदत्त पालीवाल, श्रीमती चित्रा मुद्गल, खगेन्द्र ठाकुर तथा अन्य साहित्यकारों ने भाग लिया। अन्त में हिन्दी अकादमी के सचिव श्री नानक चंद ने धन्यवाद दिया।

वाराणसी, 2 दिसम्बर, 2003 ''आज के अँधेरे और काले समय में यशपाल के विचारों का आलोक राजनीतिक वर्चस्व के विरोध में प्रतिवाद और प्रतिरोध की संस्कृति के लिए उत्प्रेरक है। प्रतिरोध के सशक्त प्रतीक के रूप में यशपाल हमारे साथ और हमारे बीच हैं।'' क्रांतिकारी कथाकार यशपाल (1903-1976 ई०) की जन्मशती के समापन समारोह में प्रमुख अतिथि वक्ता मधुरेश ने भारतेन्दु संस्थान एवं संवाद की तुलसी पुस्तकालय, भदैनी में आयोजित संगोष्ठी में उन्हें याद करते हुए कहा कि प्रतिबद्ध कथाकार और 'विप्लव' सम्पादक के बतौर यशपाल ने साम्राज्यवादी शोषण के विरुद्ध आजीवन संघर्ष किया।

अध्यक्षीय वक्तव्य में काशीनाथ सिंह ने कहा कि यशपाल की नजर में कथा साहित्य का मतलब था—'झूठा सच'! यशपाल के शब्दों को रखते हुए कहा कि कल्पना के सत्य को तथ्य की तरह विश्वास योग्य और कलात्मक झूठ को सच बना सकना ही कहानी की कला है।

प्रो० कुमार पंकज ने विस्तार से यशपाल के योगदान की चर्चा के साथ कहा कि आलोचक मधुरेश जैसे अपवाद हैं मगर हिन्दी के आलोचकों ने यशपाल के साथ न्याय नहीं बल्कि अन्याय किया। डॉ० देव ने यशपाल की पठित रचनाओं के आधार पर आज की पीढ़ी के लिए उन्हें अनिवार्य बताया। पंकज पराशर और डॉ० बलभद्र ने यशपाल की कथा-चेतना के साथ उनके सक्रिय क्रान्तिकारी जीवन के विश्लेषण की जरूरत बताई। डॉ० राजेन्द्रप्रसाद पाण्डेय ने यशपाल-साहित्य की आलोचना के साथ ही आलोचक मधुरेश के समग्र लेखकीय व्यक्तित्व का विस्तृत परिचय दिया। भारतेन्दु संस्थान के संस्थापक निदेशक डॉ० गया सिंह ने आभार ज्ञापन के साथ यशपाल सरीखे महान कथाकार की जन्मशताब्दी के प्रसंग में निरन्तर संवाद पर बल दिया। संयोजन-संचालन समीक्षक वाचस्पति ने किया।

दिल्ली में 'दस्तावेज' का लोकार्पण

गोरखपुर से पिछले पचीस वर्षों से प्रकाशित होने वाली प्रसिद्ध साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका 'दस्तावेज' के सौंवे व एक सौ एकवें अंक का लोकार्पण दिनांक 20 नवम्बर, 2003 को हिन्दी भवन सभागार, नई दिल्ली में आयोजित समारोह में जाने-माने गाँधीवादी विचारक और यशस्वी लेखक प्रो० सिद्धेश्वरप्रसाद ने किया। प्रख्यात कथाकार एवं चिंतक निर्मल वर्मा ने समारोह की अध्यक्षता की। इस अवसर पर 'दस्तावेज' के सम्पादक एवं सुपरिचित कवि-आलोचक विश्वनाथप्रसाद तिवारी के काव्य

पर लिखी आलोचनात्मक पुस्तक 'कविता सबसे सुन्दर सपना है' का लोकार्पण जाने-माने कवि-आलोचक अशोक वाजपेयी ने किया। यह पुस्तक कोचीन विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष और आलोचक डॉ० अरविन्दाक्षन ने लिखी है। डॉ० तिवारी के एक अन्य काव्य-संचयन 'बेड़ियों के विरुद्ध' (सं० रेवती रमण) का लोकार्पण उर्दू के जाने-माने समालोचक एवं साहित्य अकादेमी के अध्यक्ष प्रो० गोपीचंद नारंग ने किया।

निर्मल वर्मा ने कहा कि आज शायद ही कोई पत्रिका होगी जो गाँधी पर अंक निकालने का दुस्साहस करे। उन्होंने कहा कि हम एक ऐसा समाज जिसे गाँधी ने समता की दृष्टि से देखा था, उसे हम विस्मृति में खोते आए हैं।

प्रो० सिद्धेश्वर ने कहा कि हमारी भावधारा पर बाजारवाद का जो असर पड़ रहा है, उससे जूझने में साहित्य हमारी मदद करता है। यह सुखद है कि जब समाज के उच्चतर मूल्यों को प्रभावित करने वाली अनेक चुनौतियाँ मौजूद हैं, ऐसे समय 'दस्तावेज' ने गाँधी अंक निकाल कर एक महत्त्वपूर्ण काम किया है।

अशोक वाजपेयी ने कहा कि यह शताब्दी छोटी पत्रिकाओं की शताब्दी है। आज जब हम गाँधी को रद्दी की टोकरी में फेंक चुके हैं तथा इस त्रिशूलधारी समय में कैसे-कैसे लोग गाँधी का कैसा-कैसा इस्तेमाल कर रहे हैं, ऐसे समय गाँधी पर अंक निकालना वास्तव में एक साहस भरा काम है।

इस समारोह में डॉ० रामदरश मिश्र, डॉ० केदारनाथ सिंह, चंद्रकांत वांदिवडेकर, ए० अरविन्दाक्षन, डॉ० प्रकाश मनु, डॉ० ओम निश्चल, डॉ० गोपाल राय, वागीश शुक्ल, राजी सेठ, डॉ० रणजीत साहा, इंद्रनाथ चौधरी, डॉ० नरेन्द्र मोहन, प्रताप सहगल, हरीश नवल, प्रो० अनंत मिश्र, वीरेन्द्र जैन, शेरजंग गर्ग, सुरेन्द्र तिवारी, बलदेव बंशी, अपूर्वानंद, कृष्णदत्त पालीवाल, रीतारानी पालीवाल, गगन गिल, प्रयाग शुक्ल, देवेन्द्र राज अंकुर, डॉ० हरदयाल, अजित राय, कुमुद शर्मा, राकेश तिवारी, राजेन्द्ररंजन तिवारी, राजा खुशगाल, ज्योतिष जोशी, वीरेन्द्र सक्सेना, विजयमोहन शर्मा, सत्यकाम, ब्रजेन्द्र त्रिपाठी, अरुणकुमार, केवल गोस्वामी, अमर, डॉ० रेखा व्यास, रमेश तैलंग, सुरेन्द्र मलिक, हरिश्चंद्र शर्मा, श्यामसुन्दर, अजयकुमार, प्रभात और दिल्ली व बाहर के काफी संख्या में गणमान्य साहित्यकार, बुद्धिजीवी, पत्रकार, प्रकाशक और मीडियाकर्मी मौजूद थे। कार्यक्रम का संचालन डॉ० चितरंजन मिश्र ने किया।

शुक्ल पुरस्कार

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल साहित्य शोध संस्थान, वाराणसी ने 29 नवम्बर 2003 को प्रो० चन्द्रबली सिंह की अध्यक्षता में पुरस्कार प्रदान किये।

गोकुलचन्द्र शुक्ल पुरस्कार

वर्ष 2002 हेतु : डॉ० रमेश कुंतल मेघ

वर्ष 2003 हेतु : श्री मधुरेश

चन्द्रावती शुक्ल पुरस्कार

वर्ष 2002 हेतु : श्री भीष्म साहनी के लिए सुश्री कल्पना साहनी को प्रदान किया जायगा।

वर्ष 2003 हेतु : श्री मलय

इस अवसर पर राष्ट्रीय साहित्य संगोष्ठी का आयोजन हुआ जिसमें डॉ० शिवकुमार मिश्र, डॉ० मैनेजर पाण्डे, डॉ० शम्भुनाथ, डॉ० खगेन्द्र ठाकुर, प्रभृति विद्वानों ने भाग लिया।

वेदविद् डॉ० कपिलदेव द्विवेदी का अभिनन्दन

विश्वभारती अनुसंधान परिषद्, ज्ञानपुर द्वारा 'पद्मश्री' डॉ० कपिलदेव द्विवेदी के 86वें जन्मदिन पर काशी नरेश राजकीय महाविद्यालय में अभिनन्दन समारोह मनाया गया।

मुख्य अतिथि लोकसेवा आयोग उ०प्र० के अध्यक्ष प्रो० के०बी० पाण्डेय ने कहा कि डॉ० द्विवेदी अक्षय ज्ञान के भण्डार हैं। वेदों का अनुशीलन, मनन, चिन्तन, भारतीय मनीषियों की विलक्षण प्रतिभा का परिचायक है। भारतीय संस्कृति के स्रोत वेदरूपी महासागर का मन्थन कर पद्मश्री डॉ० द्विवेदी ने विश्व के जनमानस को जो अमृत समर्पित किया है, वह स्तुत्य है। डॉ० पाण्डेय ने कहा कि वेद जैसे दुरूह, कठिन विषय पर आपने सरल भाषा में लेखन कार्य किया है। वेद आज के युग में प्रासंगिक हैं। उस पर वेदामृतम् के 30 खण्ड लिखकर डॉ० द्विवेदी ने समाज एवं राष्ट्र के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। अध्यक्ष, डॉ० सुरेशचन्द्र तिवारी ने विस्तृत संस्मरण सुनाते हुए कहा कि डॉ० द्विवेदी के संयम, जीवनशैली, अनुशासन एवं स्वास्थ्य के प्रति सजगता का अनुसरण करना होगा।

महाविद्यालय, ज्ञानपुर के प्राचार्य डॉ० अशोक मिश्र ने डॉ० द्विवेदी को अपना गुरु बताते हुए उनके द्वारा निर्देशित मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी।

इस अवसर पर 'पद्मश्री' डॉ० कपिलदेव द्विवेदी को डॉ० के०बी० पाण्डेय एवं डॉ० सुरेशचन्द्र तिवारी ने अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया।

'पद्मश्री' डॉ० कपिलदेव द्विवेदी ने कहा कि समय का सदुपयोग करना चाहिए और जीवन का लक्ष्य ऊँचा होना चाहिए। जीवन में उन्नति के लिए संघर्ष करना आवश्यक है। आस्तिकता एवं ईश्वर-विश्वास की अत्यन्त आवश्यकता है। इससे ही मनुष्य का मनोबल ऊँचा होता है। श्रम के साथ-साथ स्वास्थ्य पर ध्यान देना होगा।

परिभाषा कोश

डॉ० प्रेमनारायण शुक्ल के सान्निध्य में मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग नई दिल्ली के तत्त्वावधान में आयोग के वैज्ञानिक अधिकारी डॉ० प्रेमनारायण शुक्ल के सान्निध्य में नाट्यशास्त्र, फिल्म एवं टेलीविजन परिभाषा कोश के हिन्दी में निर्माण के लिए विशेषज्ञों की पाँच दिवसीय संगोष्ठी पार्श्वनाथ विद्यापीठ, करौंदी, वाराणसी में 12 दिसम्बर 2003 तक सम्पन्न हुई। कोश निर्माण कार्य में सभी विद्वानों ने सहयोग प्रदान करने का आश्वासन दिया। यह कोश विषय से सम्बद्ध विद्वानों, छात्रों के लिए तो उपयोगी रहेगा, अन्य जिज्ञासुओं के लिए भी सार्थक होगा। पार्श्वनाथ संस्थान के निदेशक डॉ० महेश्वरीप्रसाद ने आभार व्यक्त किया।

अनुस्वर (शोध-सार)

अनुस्वर का अर्थ है—समान स्वर अथवा स्वर के सदृश स्वर। अनुस्वर का 'अनु' एक उपसर्ग है जिसका अर्थ है—समान या सदृश। ध्यातव्य है कि स्वर कोई ध्वनि नहीं है, बल्कि ध्वनियों का एक स्वरूप है। अ, आ आदि ध्वनियाँ हैं। ध्वनियों का यह स्वरूप प्राणवायु के निकास-मार्ग के आधार पर निर्मित होता है। ध्वन्योच्चारण की अवस्था में नाद से आनेवाली प्राणवायु का निकास जब मुख-मार्ग से होता है तो उच्चरित ध्वनियों का स्वरूप मौखिक कहलाता है और जब प्राणवायु का निकास नासिका-मार्ग से होता है तो ध्वनियों का उच्चरित स्वरूप नासिक अवश्य है। इस प्रकार प्राणवायु के निकास-मार्ग की दृष्टि से प्रत्येक अस्पृष्ट ध्वनि के दो स्वरूप बनते हैं तथा दोनों ध्वनि-स्वरूपों के उच्चारण की अवस्था में उच्चारणावयवों की स्थिति एक समान रहती है। इस तथ्य को ऋग्वेद प्रातिशाख्यकार ने भी स्वीकारा है, यथा—'स्वरानुस्वारोष्मणामस्पृष्टं स्थितम्' (ऋग्वेद प्रातिशाख्य-13.11)। प्राचीन आचार्यों ने प्राणवायु के निकास-मार्ग की दृष्टि से अस्पृष्ट ध्वनियों को वर्गीकृत नहीं किया था। यही कारण था कि कई भाषा-कालों तक आचार्यों की दृष्टि में अनुस्वार का सच्चा स्वरूप 'अयोगवाह' के रूप में संदिग्ध ही रह गया—'अनुस्वारो व्यञ्जनं वा स्वरो वा' (ऋ०प्रा०-1.5)। यदि प्राचीन आचार्यों ने अवरोध की दृष्टि से मौखिक ध्वनि-स्वरूप को 'स्वर' कहा है तो इसी दृष्टि से अं, आं, इं, उं आदि ध्वनियों का स्वरूप अनुस्वर अवश्य है क्योंकि इन ध्वनियों के उच्चारण में उच्चारणावयवों की स्थिति स्वर के समान ही रहती है। अ और अं के उच्चारण में क्रमशः मुख-विवर और नासिका-विवर का खुलना और बन्द होना भी बाह्य प्रयत्न के अन्तर्गत ही है। 'अनुस्वार' नासिका-विवर का प्रतीक है। ध्यातव्य है कि ध्वनियों का प्रतीक-रूप 'अक्षर' उच्चारणावयवों का प्रतीक है। अतः 'अनुस्वार' अनुस्वर की मात्रा है जो अ, आ आदि स्वरों की मात्रा के साथ प्रयुक्त होकर स्वर-ध्वनियों को नासिक स्वरूप प्रदान करता है।

—डॉ० रमेश मोहन शर्मा

'आत्मविश्वास', भागलपुर, बिहार

विशिष्ट-पत्र

बनारसीदास चतुर्वेदी का पत्र प्रसादजी के नाम

विशाल भारत कार्यालय
91, अपर सरकुलर रोड, कलकत्ता
1.9.1928

प्रिय महाशय,

कृपा पत्र मिला। कृतज्ञ हूँ। आपने लिखा है—''मुझे Interpret करने के लिए तो मेरी कृतियाँ किसी एक प्रतिष्ठित कवि के पास भेजी ही गई है—इससे अधिक की आवश्यकता क्या? मैं समझता हूँ कि इतने से ही आप सन्तुष्ट हो जायेंगे।'' यदि आप क्षमा करें तो यह प्रार्थना करूँगा कि मैं इतने से सन्तुष्ट नहीं हो सकता। वह प्रतिष्ठित कवि और कोई नहीं श्री माखनलाल चतुर्वेदीजी हैं जो छायावाद की अत्युत्तम कविता करते हैं। काशी में आपसे जो बातचीत हुई थी उससे और इस उत्तर से मुझे यह अनुमान होता है कि आप मुझे छायावाद का विरोधी मान बैठे हैं। क्या मेरा यह अनुमान ठीक है? सुमनजी की अनुचित कार्रवाई का विरोध और छायावाद का विरोध दोनों बिल्कुल भिन्न चीज हैं। सुमनजी ने आपके विषय में जो लेख लिखा था उसमें कई बातें (उदाहरणार्थ द्विवेदीजी का ही नाम सुकवि किंकर है और रवीन्द्रनाथ ठाकुर से बातचीत) ऐसी थीं जिनके छपने से स्वयं आप पर कटाक्ष होने की पूर्ण आशंका थी। बिना काफी संशोधन किये सुमनजी का लेख छापना खतरनाक है। उनके पिछले एक लेख के कारण पराड़करजी और श्रीप्रकाश को बहुत बुरा मालूम हुआ है। 'सुधा' सम्पादक दुलारेलालजी तथा रूपनारायण पाण्डेय पर नाम लेकर कटाक्ष किये गये थे पर मैंने नाम निकाल दिये, नहीं तो उनसे भी झगड़ा हो जाता। छायावाद के विषय में मेरी जो सम्मति एक मामूली पाठक की हैसियत से है उसे मैंने पिछले अंक में, जिसमें मैंने नरदेव शास्त्रीजी के लेखक को Condemn किया है, प्रकट कर दिया है। क्या उसके बाद भी मुझे आपकी सेवा में यह निवेदन करना पड़ेगा कि मैं छायावाद का हर्गिज़ विरोधी नहीं। मैं आपकी रचनाओं को समझना चाहता हूँ और इसीलिए एक ऐसे आदमी की, जो अच्छी तरह उन्हें समझ चुका हो, सहायता चाहता हूँ। आपको शायद यह मालूम नहीं है कि स्वयं मैंने ही पं० पद्मसिंह शर्मा पर दबाव डाल कर उनकी अन्तिम स्पीच में स्पष्टीकरण कराया था। मैं चाहता हूँ कि पुराने दल के आदमी आपकी तथा अन्य छायावादी कवियों की रचनाओं को पढ़ें और कुछ लिखें। इसमें कोई बुराई नहीं है और न यह कोई अपराध ही है फिर मैं नहीं समझता कि आप कृपा कर इस उद्योग में जो सदुद्देश्य से प्रेरित होकर किया जा रहा है, मेरी सहायता क्यों नहीं करते। आपकी सेवा में यह भी निवेदन कर देना आवश्यक है कि जिस दिन सुमनजी ने वह अनुचित स्पीच दी थी उस दिन रात को 2 घण्टे मैंने उस विषय पर उनसे बातचीत की थी। पर वे अपनी भूल मानने को तैयार न थे। दूसरे दिन भी पं० पद्मसिंह शर्मा के हमारे यहाँ आने पर भी सुमनजी ने अपनी गलती स्वीकार न की। उसके बाद भी जब पं० पद्मसिंहजी ने अन्तिम स्पीच में स्पष्टीकरण कर दिया और तब भी लोगों ने इकतर्फा वृत्तान्त छपाया तो सुमनजी की अनुचित कार्रवाई को सर्वसाधारण में लाना आवश्यक समझा गया। पर जैसा कि मैं कह चुका हूँ सुमनजी और छायावाद दोनों अलग-अलग चीज हैं।

एक प्रश्न आपसे और है। क्या आप यह उचित समझते हैं कि सुमनजी ने द्विवेदीजी तथा टैगोरजी से आपकी जो बातचीत लेख में लिखी है वह छपनी चाहिए? जिन लोगों की बातचीत हो उन दोनों से आज्ञा लेनी जरूरी है। इसीलिए मैं आपकी अनुमति चाहता हूँ।

छायावाद, रहस्यवाद और क्लिष्ट काव्य के विषय में मैंने जो अगस्त के अंक में लिखा है उसके विषय में भी आपके विचार अपनी Guidance के लिए (छापने के लिए नहीं क्योंकि आप इसे पसन्द नहीं करेंगे) जानना चाहता हूँ। आशा है कि आप इतनी कृपा अवश्य करेंगे।

श्री कृष्णदेवप्रसादजी गौड़ का पूरा पता क्या है? क्या वे बड़ी पियरी में रहते हैं? मैंने एक पत्र उनकी सेवा में भेजा था।

'विशाल भारत' के पिछले अंक भी भिजवाये थे। सरायगोवर्धन मुहल्ले का नाम भूल जाने के कारण भारती भण्डार के पते से भेजे गये थे। मिले होंगे।

आपका
बनारसीदास चतुर्वेदी

पुस्तकी भवति पंडित

पुरानी कहावत है, 'पुस्तकी भवति पंडित:'। जिसके पास पुस्तकें होती हैं, वह कभी-न-कभी, कुछ-न-कुछ पढ़ेगा ही, और पढ़ेगा तो कुछ-न-कुछ पांडित्य उसको प्राप्त ही होगा। अंग्रेजी में भी यह विश्वास हो चला है, 'अच्छा पुस्तकालय अच्छे विद्यापीठ के बराबर है'।

—भारतरत्न डॉ० भगवानदास

सांस्कृतिक परम्परा की शुरुआत पुस्तक से ही होती है। उपहारस्वरूप पुस्तक देने से पढ़ने की पिपासा जागृत होती है। **— प्रभाकर श्रोत्रिय**
सम्पादक, नया ज्ञानोदय

अच्छी पुस्तकें अनेक व्यक्तियों के जीवन को उज्जवल बनाती हैं, कठिनाई में भी जीने की शक्ति देती हैं। अभाव और कष्ट से संघर्ष करने की क्षमता प्रदान करती हैं। अकेलेपन को दूर करती हैं, निराशा में आशा का संचार करती हैं। अन्धकार को प्रकाशवान करती हैं। पुस्तकों को अपना मित्र बनाएँ और देखें जीवन को कैसी दिशा मिलती है।

पुस्तक-प्राप्ति

कवितावली पदकोश
लेखक : डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन'
प्रकाशक : कुसुम प्रकाशन
नवेन्दु सदन, आदर्श कालोनी
मुजफ्फरनगर
पृष्ठ : 143 मूल्य : 280.00 रुपये

तुलसीदास की 'कवितावली' में प्रयुक्त शब्दों तथा पदों का यह व्युत्पत्तिमूलक एवं व्याकरणिक गहन अध्ययन है। प्रयुक्त शब्द की स्थिति ब्रजभाषा, संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश में कैसी है, यह बताया गया है। यह पदकोश हिन्दी कोश-जगत के लिए सर्वथा नयी रचना है। अब तक हिन्दी में शब्द-कोश ही बनाये गये हैं, पदकोश नहीं। यह 'कवितावली' की ब्रजभाषा की आत्मा के दर्शन कराने में सहायक सिद्ध होगा। सुमनजी ने सन् 1965 ई० में पदकोश तैयार कर लिया था किन्तु सन् 1967 में उनकी मृत्यु हो गयी। उनके प्रिय शिष्य श्री कमल सिंह ने अब प्रकाशन की व्यवस्था करायी है। पुस्तक अपूर्व और अध्ययनशील विद्वानों के लिए संग्रहणीय है।

—पानासि

डॉ० विवेकी राय को साहित्य वाचस्पति सम्मान

हिन्दी एवं भोजपुरी वाङ्मय के शलाका पुरुष डॉ० विवेकी राय को 7 दिसम्बर 2003 को हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने गाजीपुर जिला पंचायत सभागार में आयोजित सारस्वत समारोह मे सर्वोच्च सम्मान साहित्य वाचस्पति से अलंकृत किया। यह सम्मान डॉ० विवेकी राय को 14 सितम्बर 2003 को हिन्दी दिवस पर जगन्नाथपुरी में दिया जाना था, किन्तु डॉ० राय की अस्वस्थता के कारण वहाँ नहीं दिया जा सका।

अध्यक्ष न्यायमूर्ति गणेशदत्त दुबे ने डॉ० राय को ग्रामीण परिवेश के अनुभूतिसम्पन्न सशक्त साहित्यकार तथा ग्राम्य जीवन के अन्यतम सृजनकर्ता कहा। इस अवसर पर डॉ० राय की पुस्तक 'पत्रों की छाँव में' का श्री गणेशदत्त दुबे ने लोकार्पण किया। समारोह में विशिष्ट साहित्यकार डॉ० पी०एन० सिंह, डॉ० जितेन्द्रनाथ पाठक, डॉ० श्रीप्रकाश शुक्ला, नर्बदेश्वर उपाध्याय, श्रीधर शास्त्री (प्रधानमंत्री, सम्मेलन) विपिनबिहारी ठाकुर, डॉ० अनिलकुमार आञ्जनेय, डॉ० उमाशंकर तिवारी प्रभृति विद्वान् उपस्थित थे। भोजपुरी के अन्य साहित्यकारों और नागरिकों ने भी डॉ० विवेकी राय को माल्यार्पण कर सम्मान प्रकट किया।

अन्त में सम्मेलन के मंत्री श्रीधर शास्त्री ने आभार व्यक्त किया।

माता के बाद पुस्तकें विश्व की सबसे महत्त्वपूर्ण सृष्टि है जो व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में विशिष्ट भूमिका का निर्वहन करती है। **— गोपीचन्द नारंग**
अध्यक्ष, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली

पुस्तक समीक्षा

कोकिल बोल रहा

युगेश्वर

मूल्य : 80.00

ISBN : 81-7124-340-1

डॉ० युगेश्वर ने अपने अध्यापकीय पेशे के चलते सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय एवं साहित्य का अवगाहन एवं अनुशीलन किया है। उन्होंने कबीर, सूर, तुलसी, प्रसाद की रचनाओं का सम्पादन किया है, उन पर पुस्तकें लिखी हैं। इसके साथ ही वह समाजवादी आन्दोलन से भी निकटता से जुड़े रहे हैं। इन्हीं क्रियाशीलता के बीच उनका मानस निर्मित हुआ है। इन निबन्धों में उनका यही मानस परत दर परत खुलता है, एक रचनात्मक आत्मीयता के साथ इन निबन्धों का केन्द्रीय भाव मनुदय का मन है। मन में हमारा काम, प्रेम, यौवन हमारी सभ्यता सब शामिल है।

डॉ० युगेश्वर ने इन निबन्धों में मन के विभिन्न प्रतीकों का इस्तेमाल करते हुए काम एवं प्रेम की परतों को खोला है। युगेश्वर को प्रेम एवं रस के प्रतीक सर्वाधिक आकर्षित करते हैं, जहाँ कहीं उन्हें रस की अनुभूति होती है, प्रेम की अनुभूति होती, जीवन की अनुभूति होती है, वहीं उनका मन विलग जाता है। उनके लिए कोकिल की पुकार साधारण पुकार से बढ़कर आनन्द का दर्शन बन जाती है। वह मानते हैं कि जब तक प्रेम में पागल कोकिल का प्रलाप चलता रहेगा तब तक रस का स्रोत नहीं सुखेगा। उनके लिए 'कोकिल' की भूमिका रचनात्मक है। यह हिंसा पागल नहीं। प्रेम पागल है। प्रेम में है। प्रेम के लिए है। प्रेम बोलकर प्रेम बढ़ रहा है। कोकिल की बोल ने प्रदूषण का खतरा टाल दिया है....प्रेम का अभाव ही प्रदूषण है। इस तरह युगेश्वर कोकिल के बोल को जीवन के अत्यन्त गहरे भाव से जोड़कर देखते हैं।

कमल पर लिखते हुए युगेश्वर कहते हैं, ''एक हाथी ने प्रात: के पूर्व ही कमल को उखाड़ दिया। अब न कमल रहेगा, न भ्रमर निकलेगा। यह हाथी और कोई नहीं। पागल यंत्र है। यह यंत्र कमल जीवन के सहज, सरल सौन्दर्य को उखाड़ रहा है। यंत्र कमल विरोधी है। न कमल। न सौन्दर्य। अब यंत्रों ने भी कमल बनाने का आरम्भ किया है। किन्तु स्वाभाविक कमल कहाँ से ला पाएगा? यंत्र कमल आज भी। कल भी। प्रकृति विरोधी होगा। प्रकृति विरोध के लिए ही उसने यंत्र कमल बनाया है।''

'जोबन रतन हैरान' शीर्षक निबन्ध में युगेश्वर जायसी की काव्य पंक्ति का विस्तार करते हुए भारतीय सभ्यता की गहराई में उतरते हैं, ''भारत की प्राचीन सभ्यता, संस्कृति, धर्म भीतर से जुड़ते थे। वे हास्य की उपेक्षा करते थे। देह को साध्य नहीं, साधन मानते थे। विशाल को विराम मानते चलते थे। इसके मुकाबले पश्चिम की सभ्यता, संस्कृति आदि सभी बाहर के खेल हैं। विशाल का आक्रमण है। भीतर में केवल मन को जानते हैं। मन के अतिरिक्त से उनका परिचय नहीं है। परिचय चाहते भी नहीं। विशालता के बेगार ने उन्हें बिकल कर दिया है। किसी दिन नींद की गोलियाँ चुक गईं तो वे पागल हो जाएँगे। कभी-कभी नींद लाने वाले विष भी व्यर्थ हो रहे हैं। कितना भी खाओ। अनिद्रा सता रही है। पूरी पश्चिमी सभ्यता अनिद्राग्रस्त है।''

युगेश्वर को लोकजीवन की चीजें अपनी ओर खींचती हैं। इसकी ताकत को वह समझते हैं। शहरी जीवन का खोखलापन उन्हें बेचैन करता है। किसी समय अत्यन्त उपेक्षित रहे खाद्य 'सत्तू' की पुनर्प्रतिष्ठा पर वह गदगद होते हैं। सत्तू के बारे में वे लिखते हैं, सत गया। सत्तू गया। देखने में रज, किन्तु सत् शक्ति का धारक का नाम सत्तू है। केवल सत् तू। सत्तू।

अरे भाई सत्तू, यह इतिहास चक्र है। घूरे के भी दिन पलटते हैं। कल तुम गाँव के अँधेरे में थे। आज तुम्हारा सूरज उठान पर है। कल पता नहीं क्या हो? दयासागर डॉक्टरों ने आज तुम्हारा अभिनन्दन किया है। ....सम्पूर्ण शहर को 'एक्झास्ट' की आवश्यकता है। कहाँ मिलेगा गन्दी हवा निकालने वाला सम्पूर्ण एक्झास्ट। एक्झास्ट से निकली गन्दगी बाहर की गन्दगी से एकाकार हो रही है। अपराजेय प्रकृति अपना महत्त्व पुन: स्थापित करने लगी है और तब तुम पुन: लोकजीवन की प्रतिष्ठा प्राप्त करोगे। 'सतुआ जीवन सत्व, सत्ता, सत्य बनने की स्थिति में है।'

इस तरह युगेश्वर अपने विभिन्न निबन्धों में कहीं शब्दों को तोड़कर उसके मूल अर्थ से जोड़ते हैं तो कहीं सामाजिक जीवन की विडम्बनाओं के प्रति विचार प्रकट करते हैं तो उपनिषदों की रोचक कथाओं को सुनाते हैं, लेकिन केन्द्रीय तत्त्व के रूप में काम, प्रेम, प्रेम का उल्लास एवं लोकजीवन उनके निबन्धों को अलग पहचान देता है। युगेश्वर एक ही निबन्ध में कभी-कभी इतने आयामों को उठाने की कोशिश करते हैं कि निबन्ध की आत्यंतिकता एवं लय बाधित होने लगता है, लेकिन उच्छवास के रूप में व्यक्त यही विचार निबन्ध को वैचारिक ऊष्मा भी प्रदान करते हैं। यह संग्रह हमें युगेश्वर के मानस जगत में उतर कर उस परिवेश को अनुभूत करने का अवसर देता है, जिसकी यह उपज है। —'गांडीव' में *संजय गौतम*

सल्तनतकालीन सरकार तथा प्रशासनिक व्यवस्था

डॉ० ऊषा रानी बंसल

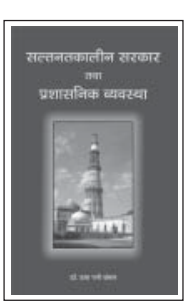

मूल्य : 50.00

ISBN : 81-7124-348-7

डॉ० ऊषा रानी बंसल द्वारा लिखित 'सल्तनतकालीन सरकार तथा प्रशासनिक व्यवस्था' नामक पुस्तक मध्यकालीन इतिहास की विवेचना की दिशा में एक सराहनीय प्रयास है। विद्वान लेखिका ने इस ग्रन्थ की रचना समकालीन इतिवृत्तों एवं अधुनातन प्रामाणिक ऐतिहासिक ग्रन्थों की सामग्री के अनुशीलन के आधार पर की है।

हमारे देश के एक बड़े भाग में शिक्षा का माध्यम हिन्दी भाषा है किन्तु दुर्भाग्यवश इतिहास के क्षेत्र में हिन्दी में प्रामाणिक ग्रन्थ गिने चुने ही हैं। इसीलिये अधिकांश विद्यार्थी कम्पटीशन आदि का लाभ उठाने से वंचित रहते हैं। बहुत से विद्यार्थी तो सब-स्टैन्डर्ड ग्रन्थों को ही आधार बनाकर परीक्षा देते हैं। लेखिका ने इस अभाव को परिलक्षित किया और एक ऐसे विषय पर अपनी लेखनी चलाई जो मध्यकालीन इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। उनकी रोचक शैली में प्रशासन का शुष्क विषय भी मानो सजीव हो उठा है। जिसका कारण यह है कि उन्होंने सामाजिक प्रतिक्रियाओं एवं धार्मिक अभिव्यक्तियों के परिप्रेक्ष्य में ही प्रशासनिक अवधारणाओं एवं सल्तनतकालीन प्रशासनिक व्यवस्था की व्याख्या की है।

प्रस्तुत पुस्तक को सात अध्यायों में विभक्त किया गया है। प्रथम अध्याय में दिल्ली सल्तनत के स्वरूप का इस्लामिक राज्य की अवधारणा के सन्दर्भ में परिशीलन किया गया है। द्वितीय अध्याय में दिल्ली के सभी सुल्तानों के अर्न्तगत राजत्त्व अवधारणा का विवरण प्रस्तुत किया गया है। तृतीय अध्याय का विषय विज़ारत का विकास है। चतुर्थ अध्याय में राज्य की आय के स्रोतों तथा भू राजस्व व्यवस्था के क्षेत्र में होने वाले सुधारों का विवरण है। मध्यकालीन इतिहास में अभिजात वर्ग की प्रशासनिक क्षेत्र में एक अहम भूमिका रही है, जिसकी समीक्षा पाँचवें अध्याय में की गई है। छठा अध्याय उलमा-वर्ग की राज्य में स्थिति का विवेचन करता है। अन्तिम अध्याय में प्रान्तीय प्रशासनिक पद्धति की विवेचना तथा प्रान्ताधिकारी (हाकिम) के दायित्वों का विशद विवरण प्रस्तुत किया गया है।

तेरहवीं शताब्दी में तुर्कों द्वारा दिल्ली सल्तनत की स्थापना का सबसे महत्त्वपूर्ण परिणाम एक ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था के प्रादुर्भाव के रूप में हुआ। जिसकी सबसे उल्लेखनीय विशेषता समरुपता (यूनिफार्मिटी) थी। इस्लामिक पूर्व के सभी देशों के समान ही यहाँ भी जो प्रशासनिक व्यवस्था लागू हुई, उस पर ईरानी प्रभाव का प्राधान्य था। किन्तु भारत में स्थानीय परम्पराएँ भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण रहीं। अलाउद्दीन ख़ल्जी जैसा शक्तिशाली शासक भी उनको पूर्ण रूप से समाप्त नहीं कर सका। प्रान्तीय व्यवस्था में इन परम्पराओं का विशेष प्रभाव दिखाई पड़ता है। लेखिका ने उपरोक्त सभी तथ्यों को ऐतिहासिक स्रोतों की समीक्षा करते हुए वर्णन किया है।

पुस्तक का मुद्रण भी अत्यन्त उत्तम कोटि का है। यही नहीं, पुस्तक का मूल्य भी अत्यन्त अल्प है। अत: अधिकांश विद्यार्थी इस पुस्तक का लाभ उठाने में सक्षम हो सकेंगे। हिन्दीभाषी क्षेत्रों में यह पुस्तक निश्चय ही लोकप्रिय होगी। अगले संस्करण में, आशा है यह शीघ्र ही प्रकाशित होगा, यदि अरबी-फ़ारसी की टेक्निकल टर्म तथा नामों आदि में मुक्ते (बिन्दु)

लगा दिये जायेंगे, तो ग्रन्थ का महत्त्व और भी बढ़ेगा। विषय और प्रस्तुति दोनों ही दृष्टियों से यह एक उत्तम प्रयास है।

—मधु त्रिवेदी
रीडर, स्कूल आव् ओपिन लर्निंग
दिल्ली यूनिवर्सिटी, दिल्ली

भुड़कुड़ा की सन्त परम्परा

डॉ० इन्द्रदेव सिंह

मूल्य : 150.00

ISBN : 81-7124-019-4

मध्य गंगाघाटी, गाजीपुर जनपद के भुड़कुड़ा ग्राम में महान् सन्तों की एक परम्परा स्थापित हुई जिसमें बूला, केशव, गुलाल, भीखा, पलटू साहब प्रमुख हैं। इन सन्तों ने निर्गुण साधना-पद्धति के क्षेत्र में एक स्वतंत्र परम्परा को जन्म दिया है जो औपनिषदिक ज्ञान पर आधृत है और जिस पर नामदेव, कबीर, नानक, मलूक, रविदास, मीरा तथा बाद में तुलसीदास जैसे सगुणोपासक सन्तों का भी प्रभाव पड़ा है।

भुड़कुड़ा के सन्तों ने अपने प्रभाव-क्षेत्र में आने वाले अंचल विशेष की भौगोलिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक परिवेश को जाना-परखा है और इसीलिए अपनी बानियों में जो कहा है, लिखा है वह उनके शिष्यों एवं प्रभावित जनमानस के लिए ग्राह्य और प्रेरणादायी है। उनकी वाणियों में स्थानीय प्रतीक एवं बिम्ब है, इसीलिए शिष्य-जन को उनके भीतर अपना ही दर्शन होता है। ग्राम्य-परिवेश में अवस्थित भुड़कुड़ा के सन्तों, इनसे सम्बद्ध गद्दियाँ तथा साधना-स्थलियाँ आज भी लोक-मानस की प्रेरणा-स्थलियाँ हैं।

सन्त-साहित्य की शृंखला में भुड़कुड़ा की सन्त परम्परा एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। सन्त-साहित्य के अध्येताओं को इस शोध-ग्रन्थ में निश्चय ही महत्त्वपूर्ण सामग्री प्राप्त होगी, ऐसा विश्वास है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एक व्यक्तित्व चित्र

ज्ञानचंद जैन

मूल्य : 190.00

ISBN : 81-7124-361-4

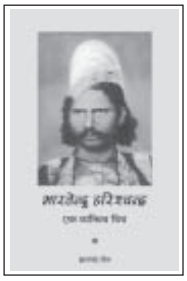

भारतेन्दु का उदय उस कालखण्ड में हुआ जब मध्ययुग के रीतिकाल का अवसान हो रहा था और अंग्रेजी शासन के माध्यम से आधुनिकता पनप रही थी। जीवन-संस्कृति बदल रही थी। काव्य की भाषा ब्रज थी। कन्हाई सुमिरन को बहानो के रूप में काव्य रचना हो रही थी। भारतेन्दु सेतु बन कर अवतरित हुए। उन्होंने रीतिकालीन ब्रजभाषा को आधुनिक स्वरूप प्रदान किया—शब्द बदले, विषय बदला और उसे लोकजीवन के समीप लाये। फिर भी उनमें रीतिकाल के संस्कार किसी न किसी रूप में शेष थे। इसी संस्कारवश वे अपने रामकटोरा बाग में रात-दिन का कवि सम्मेलन और काव्य-गोष्ठियाँ आयोजित करते थे।

वे एक ओर राजभक्त थे तो दूसरी ओर देशभक्त। ब्रिटिश सरकार ने उन्हें 20 वर्ष की अवस्था में आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त किया, 6 वर्ष तक म्यूनिस्पल कमिश्नर थे। एडिनबर्ग के ड्यूक को सुमनोऽजलि: अर्पित करने के लिए उन्होंने अपने निवास पर पण्डितों और विद्वानों को आमंत्रित किया। उन्होंने प्रिंस ऑफ वेल्स के पीड़ित होने पर कविता लिखी। ब्रिटिशराज की सराहना करते हुए भारतवासियों को सचेत किया।

अंग्रेज राज सुख साज, सबै विधि भारी।
पैधन विदेश चलि जात, यहै है ख्वारी॥

वे भगवान से प्रार्थना करते हुए—'डूबत भारत नाथ बेगि जागो' जनता को मंत्र देते हैं—

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिय को शूल।

वे प्रेमयोगी थे। माधवी और मल्लिका ही उनकी प्रेमिका नहीं थी। सारा स्त्री समाज उनके प्रेम का दीवाना था। नगरवधुएँ भी उनका प्रेम पाने को आतुर रहती थीं। उनके निधन पर नगरवधुओं ने एक पुस्तिका छपवा कर बँटवायी थी। महीनों तक भारतेन्दु के बारे में कविताएँ और शोकांजलियाँ निकलती और छपती रहीं।

भारतेन्दु की लोकप्रियता का प्रमाण था कि शवयात्रा में सारा नगर शामिल था। सारा बाजार बन्द था। प्रेमचंद ऐसे साहित्यकार की शवयात्रा में गिनती के लोग थे जिसे देखकर एक नागरिक कहता है ''लगत हौ कउनो मास्टर मर गईल ह'' प्रेमचंद जीवनभर कलम के मजदूर रह गये। भारतेन्दु ने अपने जीवन की सुगन्ध चारों ओर बिखेरी।

रीतिकालीन जीवन की सुगन्ध को आधुनिकता की प्रखरता प्रदान की। वे एक युग थे। उन्होंने इतिहास रचा, साहित्य और समाज को भारतेन्दुयुगीन बनाया।

भारतेन्दु का जीवन-सूत्र था—

चन्द टरै सूरज टरै, टरै जगत व्यवहार।
पै दृढ़ श्री हरिचन्द को, टरै न सत्य विचार॥

ऐसे विराट व्यक्तित्व की विविधता का चित्रण वयोवद्ध साहित्यकार-पत्रकार ज्ञानचंद जैन ने इस पुस्तक में किया है। पुस्तक में अनेक अलभ्य चित्र दिए गये हैं, जो भारतेन्दुजी के परिवारजनों की उदारता से प्राप्त हुए हैं।

वट वृक्ष की छाया में

कुमुद नागर

मूल्य : 190.00

ISBN : 81-7124-346-0

कुमुद नागर की 'वटवृक्ष की छाया में' एक ओर नागर परिवार की चार पीढ़ियों की गाथा है, दूसरी ओर पिता श्री अमृतलाल नागर की जीवन कथा, जो कुमुदजी ने एक भावुक पुत्र की भाँति नहीं, बल्कि एक संवेदनशील कलाकार की हैसियत से लिखी है। नागरजी की रचनात्मक ऊर्जा, पारिवारिक इंटरएक्शन और घरेलू समस्याओं के साथ संघर्षण में उपजती रही है। घर्षण का प्रभाव जिस प्रकार नागरजी पर पड़ा, उसी प्रकार परिवार पर पड़ना भी स्वाभाविक था। यह प्रभाव परिवार ने किस प्रकार ग्रहण किये, उनके परिप्रेक्ष्य में नागरजी की क्या छवि उभरती है। यह पुस्तक उसे रेखांकित करती है। अपने आप में यह अत्यन्त रोचक और कहीं-कहीं बहुत विचलित कर देनेवाला लेखन है; खासतौर से वह पक्ष जो परम प्रतिभाशील रचनाकारों और कलाकारों के तनाव और संघर्ष को उजागर करता है।

'वटवृक्ष की छाया में' हिन्दी के सामान्य पाठक के लिये तो बहुमूल्य सिद्ध होगी ही, साहित्य के गम्भीर विद्यार्थियों और शोधार्थियों के लिये यह ऐसी सामग्री सम्पन्न है जो कहीं दूसरी जगह उपलब्ध नहीं। पुस्तक में नागरजी के पारिवारिक तथा साहित्यिक जीवन के अनेक दुर्लभ चित्र दिये गये हैं।

लालाजी का पर्दा

अशोकजी

मूल्य : 120.00

कड़ी धूप में चलते-चलते, किसी पेड़ की छाया में, जो सुख मिलता है, वही संघर्षमय जीवन में हास्य-विनोद के कुछ क्षण सुख देते हैं।

'लालाजी का पर्दा' ऐसी ही हास्यविनोद की कहानियों का संग्रह है। पत्रकार अशोकजी गम्भीर परिस्थितियों में भी हास्यविनोद से गुदगुदाते रहते थे। इस संग्रह की कहानियाँ समाज के विभिन्न व्यक्तियों और उनके व्यवहार के मनोरंजक प्रसंग प्रस्तुत करती हैं।

पुस्तक-प्राप्ति

रेत में बहता जल

सम्पादक : चन्द्रबली सिंह, अशोक पाठक

मूल्य : 100 रुपये

प्रकाशक : आर्य भाषा संस्थान, भदैनी, वाराणसी

सत्रह रचनाकारों की काव्य रचनाओं का यह संग्रह वाराणसी के जनवादी लेखक संघ का सराहनीय साहित्यिक प्रयास है। काशी के प्रमुख रचनाकारों के इस संग्रह को देखकर प्रतीत होता है कि काशी से रचनाधर्मिता अभी लुप्त नहीं हुई है। 'रेत में बहता जल' में विभिन्न संवेदनाएँ व्यक्त करती लोकजीवन को स्पर्श करती कविताएँ कवि के निजी मनोभावों को व्यक्त करती हैं। इस संग्रह में काशी के प्रमुख कवि हैं—

ब्रह्माशंकर पाण्डेय, वशिष्ठ मुनि ओझा, ब्रजेश्वर, राजेन्द्रप्रसाद पाण्डेय, अनिरुद्धप्रसाद त्रिपाठी, डॉ० विद्यानन्द मुद्गल, अशोक पाठक, बलराज पाण्डेय, राजेन्द्र आहुति, मुक्ता, नईम अख्तर, ओम धीरज, प्रदीप तिवारी, केशवशरण, डॉ० नीरजा माधव, आनन्दवर्धन, रमेश पाण्डेय।

आशा है, इस संग्रह का सर्वत्र स्वागत होगा।

❑ ❑ ❑

करमा (नृत्य-गीत, परम्परा व उत्सव)
डॉ० संजय चतुर्वेदी

मूल्य : 200 रुपये

प्रकाशक : हिण्डालको इण्डस्ट्रीज लि०, सोनभद्र

सोनभद्र आदिवासियों का क्षेत्र है। आदिवासी की अपनी जीवन-संस्कृति है, वह किसी से प्रभावित नहीं है। उनके नृत्य, संगीत, कला, वास्तुकला उनके सांस्कृतिक स्वरूप का बोध कराते हैं। 'करमा गीत' की ये पंक्तियाँ उनकी जीवन-व्यथा को व्यक्त करती हैं—

अइसन त जनमऽ
जगह छेड़ि के पहाड़े डेरा
अइसन त जनम।
कोई खाय दाल भात
कोई घीउ खीचरी
अदवासी खाथ कोदो रोटी
पान में चुराय के
अइसन त जनम, जगह छोड़ि के पहाड़े डेरा

❑ ❑ ❑

और तस्वीर बदलने लगी (कुष्ठ विजय पर फीचर)
सम्पादक : पुष्पेन्द्रपाल सिंह
प्रकाशक : माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय, भोपाल

पत्रकारिता को समाज की सच्चाइयों से जोड़ने का अनूठा प्रयास। कुष्ठ रोगियों की खोजपूर्ण जिन्दगी की वैविध्यपूर्ण सच्चाइयाँ। पत्रकारों के लिए नई दिशा का संकेत।

❑ ❑ ❑

रोशनी (एक ज्वलन्त पारिवारिक नाटक)
आफताब हुसेन
प्रकाशक : सारांश साहित्य मन्दिर
मुम्बई-401 107

मूल्य : पन्द्रह रुपये

नाटक के केन्द्र में बच्चा है जो परिवार को रोशनी देता है। प्रेरणास्पद अभिनेय नाटक।

❑ ❑ ❑

आज भी खरे हैं तालाब
अनुपम मिश्र
प्रकाशक : नयी किताब, दिल्ली-110 085

मूल्य : 60.00 रुपये

पर्यावरण के लिए तालाब के महत्त्व को बताती उपयोगी पुस्तक। पुस्तक के पाँच संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। प्रत्येक नागरिक के लिए पठनीय।

❑ ❑ ❑

शेष
दो ज़बानों की एक किताब
जिल्द-3, अक्टूबर से दिसम्बर 2003
सम्पादक : हसन जमाल
लोहारपुरा, जोधपुर

सालाना : 80.00 रुपये

'शेष' अपने ढंग की किताबनुमा त्रैमासिक पत्रिका है। उर्दू की विशिष्ट रचनाओं का हिन्दी अनुवाद इसकी विशेषता है। प्रस्तुत अंक में इरानी कहानियाँ, नज़्में, ख़ुत्वा (सम्बोधन), गुफ्तगू, ख़ुद नविश्त (आपबीती), पाकिस्तनामा, सफरनामा, मज़्मून, ग़ज़लें, नज़्में, तुर्की शायरी, कविताएँ, दोहे, लघु कविताएँ, परख, खतों से शीर्षकों के अन्तर्गत अनेक प्यारी रचनाएँ हैं—जिन्दगी के विविध रूप-रंग दिखातीं। उर्दू ज़बान की नफासत से भरपूर। गोपीचंद नारंग का भाषण और उनका इंटरव्यू कितनी महत्त्वपूर्ण जानकारी देता है। उर्दू ज़बा की नफ़ासत तारीफे काबिल है। नागरी लिपि में उर्दू की रचनाएँ पढ़ना सबके लिए सुविधाजनक है। इस त्रैमासिक का सर्वत्र स्वागत होना चाहिए।

❑ ❑ ❑

पाती
(भोजपुरी दिशाबोध की मासिक पत्रिका)
सम्पादक : अशोक द्विवेदी
टैगोर नगर, सिविल लाइन्स, बलिया

'पाती' खांटी भोजपुरी की पत्रिका है। इन दिनों भोजपुरी साहित्य की कई छोटी-बड़ी पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं। उनमें 'पाती' के अब तक 45 अंक निकल चुके हैं। इसी से लगता है कि इसके पाठकों की यह प्रिय पत्रिका है। बरमेश्वर सिंह का दोहा आज की स्थिति पर अच्छा व्यंग्य है। कहानियाँ भी रोचक और गुदगुदाने वाली हैं। 56 पृष्ठों की पत्रिका का मूल्य पन्द्रह रुपया है।

❑ ❑ ❑

हिन्दी उपन्यास का इतिहास
परमलाल गुप्त
प्रकाशक : पीयूष प्रकाशन, सतना (म०प्र०)

मूल्य : 40.00 रुपये

भारतीय वाङ्मय

मासिक

वर्ष : 5 **जनवरी 2004** **अंक : 1**

प्रधान सम्पादक
पुरुषोत्तमदास मोदी

सम्पादक
परागकुमार मोदी

वार्षिक शुल्क
रु० 40.00

अनुरागकुमार मोदी
द्वारा
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
के लिए प्रकाशित

वाराणसी एलेक्ट्रॉनिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०
वाराणसी
द्वारा मुद्रित

E-mail : sales@vvpbooks.com
Website : **www.vvpbooks.com**

डाक रजिस्टर्ड नं० ए डी-174/2003 RNI No. UPHIN/2000/10104
प्रेस रजिस्ट्रेशन एक्ट 1807 ई० धारा 5 के अन्तर्गत
Licenced to post without prepayment at
G.P.O. Varanasi
Licence No. LWP-VSI-01/2001

सेवा में,

प्रेषक : (If undelivered please return to :)

विश्वविद्यालय प्रकाशन
प्रमुख प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता
(विविध विषयों की हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी पुस्तकों का विशाल संग्रह)
विशालाक्षी भवन, पो०बाक्स 1149
चौक, वाराणसी-221 001 (उ०प्र०) (भारत)

VISHWAVIDYALAYA PRAKASHAN
Premier Publisher & Bookseller
(BOOKS IN HINDI, SANSKRIT & ENGLISH FOR STUDENTS, SCHOLARS, ACADEMICIANS & LIBRARIAN)
Vishalakshi Building, P.O. Box : 1149
Chowk, VARANASI-221 001(U.P.) (INDIA)

: Offi. : (0542) 2421472, 2353741, 2353082, (Resi.) 2436349, 2436498, 2311423 ● Fax : (0542) 2353082